ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-3 No. 1 March 2020

आधुनिक भारत के जनक - राजा राममोहन राय

डॉ. आशा पारे

आधुनिक भारत के निर्माण में किसी एक व्यक्ति की भूमिका तो नहीं रही, बल्कि इस जटिल कार्य को सम्पादित करने का श्रेय अनेक समाज सुधारकों, शिक्षाविदों, राजनयिकांे एवं क्रांतिवीरों को जाता है जिनके सम्मिलित प्रयासों से उस काल की परिस्थितियों में बदलाव आया है।

18 वीं सदी में भारत ने एक आधुनिक युग में कदम रखा था। यदि उस श्रृंखला की प्रथम कड़ी का बारीकी से अवलोकन करें तो एक कुशल शिल्पकार के रूप में इतिहास में स्थान प्राप्त करने वाले महान समाज सुधारक राजा राममोहन राय का नाम इसमें अग्रणी है।

राजा राममोहन राय के जन्म के पूर्व की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का अध्ययन करने पर ज्ञात हुआ कि वह इतिहास का एक संक्रमणकाल था जब मध्य युग निराशा के गहन अंधकार में लुप्त सा हो गया था। मुगल साम्राज्य अपनी ताकत खोकर अंतिम सांसें गिन रहा था। चारों ओर अन्याय, अशांति और अराजकता का साम्राज्य था। छोटे-छोटे राज्यों ने आपस में ही लड़कर अपना अस्तित्व नष्ट कर लिया था और इसका लाभ उठाकर विदेशी ताकतें अस्तित्व में आ रही थी।

सन् 1600 के लगभग ब्रिटिश कम्पनी व्यापार के उद्देश्य से भारत आई थी और फ्रांसीसी व्यापारी भी व्यापार के उद्देश्य से तब भारत में विद्यमान थे। दोनों ही व्यापारिक कम्पनियों में प्रतिद्वंदिता की भावना थी और इसमें ब्रिटिश कम्पनियों ने विजय हासिल करके फ्रांसीसी कम्पनियों को खदेड़ दिया। इस प्रकार भारतीय व्यापार पर ब्रिटिश कम्पनियों का एक छत्र अधिकार हो गया था। विलीन होते मुगल साम्राज्य ने ब्रिटिशों की राज्य लिप्सा को उकसाया जिससे व्यापार के साथ ही साथ उनके राजनैतिक मंसूबे भी पूरे होने लगे। भारत की आर्थिक स्थिति मुगलकाल में बेहतर थी। देश व्यापार, देशी उद्योग धंधों के साथ-साथ शिल्प और कला कौशल में भी पूर्ण था। भारत की अधिकांश जनता ग्रामीण क्षेत्रों में रहती थी और उनका मुख्य व्यवसाय कृषि था। वस्तु विनिमय के द्वारा ग्रामीण अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति आपस में ही कर लिया करते थे। न्याय की व्यवस्था ग्राम पंचायत के सुपुर्द थी। इस प्रकार ग्राम सम्पन्न और खुशहाल थे।

1757 में हुये प्लासी के युद्ध ने भारत में ब्रिटिश साम्राज्य की नींव को सुदृढ़ बना दिया था और राज्य विस्तार के साथ-साथ ब्रिटिश कम्पनी ने प्रशासनिक स्थिरता भी कायम करना आरंभ कर दिया। प्रशासनिक स्थिरता से मुगलों के चंगुल से छूटे भारतीयों ने राहत महसूस की थी क्योंकि मुगलों के अराजक तंत्र ने देश को बदहाली के गर्त में ढकेल दिया था। देश में नये शासन तंत्र और न्याय व्यवस्था से भारतीय कुछ आश्वस्त से नजर आने लगे थे।

तभी विदेशी व्यापारियों ने देशी उद्योग-धंधों पर अपना शिकंजा कसना आरंभ कर दिया था जिससे देशी उद्योगों का पतन आरंभ हो गया था। कृषकों और शासकों के बीच एक जमींदार वर्ग का जन्म हो गया था जिनके माध्यम से अंग्रेजों ने किसानों से लगान वसूलना आरंभ कर दिया था। लगान वसूली की व्यवस्था मुगल काल में भी थी, किन्तु अंग्रेजों से संरक्षण प्राप्त कर के जमींदार वर्ग सशक्त हो गया था और वे किसानों से मनमाना लगान वसूल करके उनका शोषण करने लगे थे। इस प्रकार आर्थिक शोषण से न सिर्फ व्यापार-व्यवसाय चैपट हो चला था बल्कि कृषकों की आर्थिक स्थिति भी जर्जर हो गयी थी। जमींदार वर्ग ने लगान के रूप में गरीब किसानों की भूमि हड़प कर उन्हें बंधक बना लिया था।

मध्यकाल की अराजक परिस्थितियों ने वैसे ही भारतीय जनमानस को खोखला कर दिया था। धर्म-सम्प्रदाय और जातिवाद के नाम पर समाज में आये दिन टकराव की स्थिति निर्मित हो रही थी। हिन्दू और मुस्लिम संस्कृतियों में

Copyright © 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-3 No. 1 March 2020

वैसे भी कभी एकता स्थापित नहीं हो सकी थी और हमेशा ही उनके बीच वैचारिक टकराव की स्थिति बनी रहती थी, जिससे समाज की जड़ें खोखली होती जा रही थी।

इस टकराव का एक प्रमुख कारण उनकी धार्मिक मान्यतायें थी जिसके कारण दोनों ही अपने-अपने धर्म का और उसमें प्रतिपादित सिद्धांतों का कट्टरतापूर्वक पालन करते थे और इस बात पर गर्व महसूस करते थे कि हमारे सिद्धांत अधिक कठोर हैं। धर्म के नाम पर रूढ़ीवाद और कुरीतियों का समाज में बोलबाता था। वास्तविक जीवन पर आडम्बर हावी हो चुका था। लोग धार्मिक अनुष्ठानों और व्रत-पूजन में इतना अधिक खर्च करते थे कि आर्थिक स्थिति सुदृढ़ न होने पर, कर्ज के बोझ से लद जाते थे। यहाँ तक कि खेत-भूमि, पशु, गहने आदि गिरवी रखकर भी वे इन आडम्बरों का निर्वाह करते थे। हिन्दू धर्म मे अनेक देवी-देवताओं का पूजन, खान-पान और छुआछूत के बंधन बड़े ही कठोर थे। ब्याह-शादी, पुत्र-जन्म आदि अवसरों पर अपनी प्रतिष्ठा का थोथा प्रदर्शन ऐसा रिवाज था जिसने आम आदमी की कमर तोड़ कर रख दी थी। लोग भूत-प्रेत, जादू-टोना और तंत्र-मंत्र पर अंधविश्वास करते थे। इस प्रकार तत्कालीन समाज अनेक विकृत परम्पराओं और रीति-रिवाजों से जूझ रहा था एवं समाज में संवेदना का नितांत अभाव था।

राममोहन राय का जन्म भी एक कुलीन ब्राह्मण परिवार में हुआ था। बचपन से ही वे अपने घर-परिवार, व्रत, अनुष्ठान और परम्पराओं का निर्वाह होते देख रहे थे। उनकी माता तारिणी देवी भी एक धर्म-परायण महिला थी। पिता भी माता के कार्यों में सदैव धन-धान्य से सहयोग करते थे। इस प्रकार वे अपने घर में और समाज में होने वाले धार्मिक कृत्यों से बाल्यकाल से ही परिचित थे। किन्तु जब अरबी-फारसी की शिक्षा प्राप्त करने के लिये वे सूफी संतों के सान्निध्य में रहे तब उन्हें मूर्ति पूजा पर अविश्वास होने लगा था और घर में दबे-छिपे शब्दों में धीरे-धीरे उन्होंने इस विरोध को प्रकट करना एवं तर्क वितर्क करना आरम्भ कर दिया था। वे मूर्ति पूजा के कट्टर विरोधी बन गये थे। यह इस बात का द्योतक है कि वे परम्परानुसार रीति-रिवाजों का निर्वाह करने की अपेक्षा हर तथ्य को तर्क की कसौटी पर कसते थे, इसीलिये उन्होंने अपने माता-पिता की अंध श्रद्धा भक्ति को भी आंख मूंदकर स्वीकार नहीं किया और अधिक विवाद की स्थिति में अल्पायु में ही मूर्ति पूजा के विवाद पर घर छोड़ कर चले गये। यह उनकी तटस्थता और विचारों की दृढ़ता को प्रदर्शित करता है। परिवार के कठोर विरोध का सामना उन्हें कई बार करना पड़ा और माता द्वारा उन्हें हमेषा के लिये घर से निकाल दिया गया।

अपने धर्म ग्रंथों का भी उन्होंने बड़ी ही बारीकी से अध्ययन किया और यह पाया कि धर्म ग्रंथों और शास्त्रों द्वारा पंडे और पुजारी किस तरह भोली भाली जनता को धर्म का भय दिखाकर लूट रहे हैं। चूंकि वेद और पुराण सब ब्राह्मणों की मिल्कियत बन चुके थे इसलिये अधिकांश लोग वेदों की सत्यता को नहीं जानते थे। उन्हें तो बस वही मालूम होता था जो स्वार्थी पंडितों के द्वारा उन्हें बताया जाता था। अपनी स्वार्थ पूर्ति के लिये अनेक धार्मिक-अनुष्ठान, जप-तप और कर्मकाण्ड, ईश्वर और परलोक का भय दिखाकर लोगों से करवाया जाता और बदले में धन, धान्य, पशु और अन्य प्रकार के दान की प्राप्ति करके लोगों का शोषण किया जाता था। इस प्रकार मध्यम और गरीब वर्ग के लोगों में तो ईश्वर और परलोक का इतना अधिक भय व्याप्त था कि वे अपना सब कुछ बेचकर भी पूजा-पाठ करवाने से नहीं हिचकते थे।

राममोहन राय का ध्यान सबसे पहले इस बात की ओर गया कि किस प्रकार धर्म के नाम पर लूट-पाट मची है, तब उन्होंने धर्म के वास्तविक रूप का दर्शन लोगों को करवाया। वेदों और पुराणों का सरल भाषा में अनुवाद करवाकर लोगों के मध्य उसकी प्रतियां बंटवाने के पीछे उनका एकमात्र उद्देश्य लोगों को पुरोहितों के हथकंडों के प्रति सचेत करना था। यह एक महान कार्य था यहीं से लोगों में चेतना का संचार हुआ। इस बात पर उन्हें पुरोहितों और कट्टर हिन्दू धर्मावलम्बियों का तीव्र विरोध भी सहना पड़ा क्योंकि उनकी आय का स्त्रोत धीरे-धीरे बंद होने लगा था और लोगों का पुरोहितों और पंडों पर से विश्वास उठने लगा था।

Copyright © 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-3 No. 1 March 2020

उनकी लिखी पुस्तक 'तुहफात-उल-मुवाहिद्दीन' में भी मूर्ति पूजा और कर्मकाण्ड का विरोध किया गया है। इस प्रकार यह बात स्पष्ट हो जाती है कि वे अपने समय के असाधारण रूप से सजग, संवेदनशील और संस्कारवान व्यक्ति थे। उनकी धार्मिक वृत्ति का परिचय इस बात से मिलता है कि उन्होंने कभी अपने हिन्दू धर्म का परित्याग नहीं किया। लोगों ने उन्हें धर्म विरोधी और 'काफिर' की भी संज्ञा दे डाली थी।

न सिर्फ हिन्दू धर्म के प्रति बल्कि इस्लाम और ईसाई धर्म के प्रति भी उनके मन मंे पर्याप्त श्रृद्धा थी। इसलिये उन्होंने इस्लाम धर्म का ज्ञान प्राप्त करने के साथ-साथ कुरान का भी अध्ययन किया और इस्लाम के मूर्ति पूजा के विरोध के सिद्धांत ने उन्हें प्रभावित किया। एकेश्वरवाद पर बल देना और उसका कट्टरतापूर्वक पालन करना इस्लाम की विशेषता है जिसका उन्होंने भी समर्थन किया। फिर भी इस्लाम जैसे एकेश्वरवादी धर्म में भी अंधविश्वास और संप्रदाय को उन्होंने चुनौती दी और कहा कि सच्चाई से दूर रहकर, किवदन्तियों और मूर्खता पर आधारित विश्वासों के पीछे दौड़ना जीवन का मूल उद्देश्य नहीं है। शास्त्रों का अंधानुकरण न करके स्वतंत्र चिंतन, बुद्धिमत्तापूर्ण ढंग से विवेक का प्रयोग करते हुये मानव एकता और प्रेम का संदेश ही धर्म का मूल है।

अवतारवाद, परम्परावाद, रूढ़िवाद और अलौकिक चमत्कारों ने तत्कालीन समाज को बड़ा भ्रमित कर रखा था। राममोहन ने इन सबका विरोध करते हुए कहा कि ईश्वर और परलोक पर आस्था के अलावा सब कुछ मिथ्या है। हकीकत भी यही है क्योंकि यदि व्यक्ति की ईश्वर में आस्था नहीं है और परलोक में विश्वास नहीं रखता है तो वह उद्दण्ड हो जायेगा और पाप कर्म करने से भी नहीं हिचकिचायेगा। अतः ईश्वर और परलोक का भय ही मनुष्य को मनुष्य बनाता है, क्योंकि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और समाज में शांति और न्याय व्यवस्था बनाये रखना हर व्यक्ति का कत्र्तव्य है। इसलिये उच्छृंखलता नहीं बल्कि आदर्शों की स्थापना से ही समाज सशक्त बनेगा।

राममोहन राय ने धर्म को तोड़ने वाला नहीं बल्कि जोड़ने वाला तत्व माना है और कहा कि धर्म में सत्य और विवेक का समावेश ही उसे पूर्णता प्रदान करता है। इस प्रकार वे सृष्टि के समस्त कार्य व्यापार को कार्य-कारण का परिणाम मानते थे।

राममोहन राय के धार्मिक विचारों में ईसाई धर्म का भी प्रभाव रहा है। बाईबिल पढ़ने के लिये उन्होंने हिन्दू, यूनानी और लैटिन भाषा का भी ज्ञान प्राप्त किया। ईसाई धर्म ग्रंथों का अध्ययन करके उन्होंने कई पुस्तकें भी लिखीं वे बाईबिल के नैतिक उपदेशों के समर्थक रहे किन्तु 'त्रित्व-वाद' पर मत विरोध था, अतः ईसाई पादरियों से भी उनका विरोध चलता रहा। ईसाई मिशनरियों ने हिन्दुओं पर दबाब डालकर, लालच देकर और उनकी विवशता का लाभ लेकर उन्हें ईसाई धर्म ग्रहण करने हेतु प्रेरित किया। इसका राममोहन ने कड़ा विरोध किया। उनका यह मानना था कि व्यक्ति अपनी स्वेच्छा से, अपनी बुद्धि और विवेक से, विचारशीलता और स्वतंत्र चिंतन के द्वारा अपना धर्म स्वयं चुन सकता है। यदि ईसाई धर्म के सिद्धांत व्यक्ति को प्रभावित करते हैं तो वह उसे अपनाने के लिये स्वतंत्र है किन्तु भ्रम में पड़ कर नहीं।

राममोहन के स्वतंत्र चिंतन ने उन्हें सभी धर्मों के महान सिद्धांतों का समावेश करके एक सार्वभौम धर्म की स्थापना हेतु प्रेरित किया। वे मानव धर्म को ही विश्व जनीन धर्म समझते थे और इस धार्मिक समन्वय के साथ उनकी एक और मौलिकता प्रकट होती थी वह है समाज कल्याण के आदर्श के साथ एकेश्वरवाद का सामंजस्य स्थापित करना। सार्वभौम प्रेम के आदर्श द्वारा मानव कल्याण का आदर्श स्थापित करना ही राममोहन राय की दृष्टि में धर्म का मूल सिद्धांत था।

वैदिक धर्म और दर्शन में आई संकीर्णता ने वेदों का ज्ञान नारी और शूद्रों के लिये वर्जित कर दिया था और इस भेदभाव को तोड़ने का ज्ञान राममोहन ने तंत्र शास्त्र से प्राप्त किया। तंत्र शास्त्र का ज्ञान उन्हें हरिहरानन्द तीर्थस्वामी के सान्निध्य में रहकर प्राप्त हुआ। सर्वप्रथम तंत्र शास्त्र ने ही नारी, शूद्र, यवन और चाण्डालों के लिये ब्रह्मज्ञान और उपासना के अधिकार को स्वीकार किया। इस प्रकार नारी अधिकारों के हनन और 'सती प्रथा' के विरूद्ध शास्त्रार्थ में

Copyright © 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-3 No. 1 March 2020

उन्होंने तंत्र शास्त्र की युक्तियाँ और उद्धरण प्रस्तुत किये। सार्वभौम उदार दृष्टिकोण भी राममोहन को तंत्र ज्ञान से ही प्राप्त हुआ था।

यही उद्देश्य 'ब्रह्म समाज' की स्थापना में भी परिलक्षित होता है। जहाँ पर उन्होंने उपनिषदों के आधार पर रचे हुये भजनों द्वारा अनुशासन और शालीनता उत्पन्न की। उनका उद्देश्य किसी अलग धर्म की स्थापना करना न होकर एक ऐसे प्रार्थना भवन का निर्माण करना था। जहाँ सभी धर्म के अनुयायी बिना किसी भेदभाव के एक छत के नीचे एकत्र होकर विनम्र भाव और भक्ति भावना से निराकार, सर्वव्यापी, सनातन ईश्वर की उपासना करेंगे। इससे एक दूसरे के धर्म की निन्दा न करके परस्पर सहिष्णुता और भाईचारे की भावना को बल मिलेगा। यह एक पवित्र उद्देश्य था जिसके पीछे विश्व बंधुत्व की भावना विद्यमान थी।

धर्म और कर्म पर आधारित कुरीतियों के विरोध में राममोहन राय उठ खड़े हुये, यहीं से एक नवीन विचारधारा का सूत्रपात हुआ और इसी विचारधारा ने युवा वर्ग में एक जागृति उत्पन्न कर दी थी। युवा वर्ग में पुरानी परम्पराओं के प्रति रोष था, वे परिवर्तन चाहते थे। समाज भी परिवर्तन चाहता था। राममोहन ने अज्ञान के अंधकार को दूर करने के लिये और समाज में चेतना का संचार करने केे लिये शिक्षा के महत्व को समझा और समाज में शिक्षा का व्यापक प्रचार प्रसार करने के पवित्र उद्देश्य में जुट गये। उन्होंने देखा कि मध्यकाल में सामाजिक कुरीतियों का स्वरूप बड़ा ही वीभत्स था वैसे तो भारतीय समाज सदियों से अनेक कुरीतियों का शिकार रहा है और यही कारण था कि समाज में अनेक विभाजन होेते रहे और एकता की भावना खण्ड-खण्ड होती रही। देखा जाये तो मुसलमान आक्रमणकारियों द्वारा हिन्दुओं पर विजय प्राप्त करने का एक प्रमुख कारण था-भारत में सामाजिक संगठन का अभाव। राममोहन राय का ध्यान सर्वप्रथम समाज मेेें फैली इन कुरीतियों की ओर गया और उन्होंने बाल विवाह, बहु विवाह, कन्या-वध, कन्या-विक्रय, सती प्रथा जैसी अनेक प्रचलित प्रथाओं पर आक्रोश जताते हुये कई लेख लिखे और जनमत संग्रह किया। ब्रह्म समाज की स्थापना के पीछे भी यही उद्देश्य था। उनके जीवन का समग्र दर्शन जन-कल्याण की भावना पर आधारित था। उन्होंने तत्कालीन समाज में फैली रूढ़ियों की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित कराया और उन्हें दूर करने के लिये सुधार आंदोलन चलाये। उस काल में समाज-सुधार के क्षेत्र में जितने भी आंदोलन चलाये गये, उनमें सबसे सफल था, सती प्रथा के विरोध में चलाया गया आंदोलन। इसकी सफलता थी ब्रिटिश सरकार की सहायता से सती प्रथा विरोध में कानून बनवाना। प्राचीनकाल से चली आ रही इस प्रथा को सामाजिक और धार्मिक मान्यता प्राप्त हो चुकी थी। जीवित स्त्री को चिता में जलता हुआ या जलाये जाते हुये देखकर उनका हृदय करूणा से भर उठता था। यही कारण था कि स्त्रियों पर होने वाले इन अत्याचारों के विरूद्ध उन्होंने खुलकर आंदोलन किया। इन अत्याचारों की जड़ में दिये कारणों को खोजकर उनका निवारण करना अपने आप में एक कठिन कार्य था। इस कार्य में उनके विरोधी अधिक हुये और सहयोगी दो चार ही थे। सती प्रथा के मूल में कारण था 'कुलीन प्रथा', जिसके अंतर्गत एक व्यक्ति कई विवाह कर सकता था किन्तु उसकी मृत्यु होने पर उसकी विधवा स्त्रियों को सम्पत्ति में अधिकार नहीं दिया जाता था। इसीलिये विधवा स्त्री को पति के शव के साथ जलाकर पुरुष प्रधान समाज इन विवादों को ही समाप्त कर देना चाहता था। विधवा स्त्रियों की दशा समाज में बड़ी ही दयनीय थी। जिसके कारण स्त्रियाँ स्वयं भी अपमानपूर्ण जीवन जीने की अपेक्षा सम्मानजनक मृत्यु (सती) को अधिक महत्व देती थी। इस प्रकार राममोहन राय ने ही सर्वप्रथम यह सुझाव दिये कि स्त्री को विवाह से पूर्व पिता की और विवाह के उपरांत पति की संपत्ति में अधिकार दिया जाना चाहिये। बहुविवाह की प्रथा समाप्त की जाये और विधवा स्त्री को पुनः विवाह करने की अनुमति देना चाहिये। इसके अलावा सबसे महत्वपूर्ण है स्त्रियों की शिक्षा। क्योेंकि अशिक्षा और अज्ञान ही कुरीतियों का पोषक होता है।

समाज में जितनी भी प्रथायें और परम्परायें हैं ये सब अधिकांश स्त्रियों द्वारा ही पोषित हैं। स्त्रियाँ ही अपने परिवार और समाज में फैली इन परम्पराओं और रीति-रिवाजों की सौगात अपनी पुत्री को और पुत्र वधु को देती है। इस तरह पीढ़ी दर पीढ़ी ये प्रथायें चलती रहती हैं। 18 वीं सदी में सती प्रथा को कानून बनाकर समाप्त करने के प्रयास किये गये किन्तु बीसवीं सदी में गाहे-बगाहे इस प्रकार की घटना घटती रहीं और समाज मूक-दर्शक बना रहा।

Copyright © 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-3 No. 1 March 2020

इक्कीसवीं सदी जिसे हम पूर्ण रूप से वैज्ञानिक युग की संज्ञा दे रहे हैंे, इस युग में आकर भी यदि 'सती' जैसी घटनाओं की पुनरावृत्ति होती है तो निश्चय ही यह हमारी प्रगति पर प्रश्न चिन्ह है। इस प्रकार की घटनायें सभ्य समाज के लिये एक कलंक है और हमारे संविधान के उपहास का कारण भी।

अट्ठारहवीं सदी में राजा राममोहन राय जैसे विचारकों ने इस घृणित प्रथा को समाप्त करने के लिये आंदोलन किया जबकि देश में ईस्ट इंडिया कंपनी का शासन था। जब उस काल में हमारे महान नेता विदेशी सरकार से कानून बनवाकर, घोर-विरोधों के बावजूद इस प्रथा को समाप्त करवा सकते थे, तो आज तो हमारा देश स्वतंत्र है। हमारे देश में प्रजातंत्र है और नये-नये कानून बनते रहते हैं। फिर यदि आज के समय में मध्यकाल की पिछड़ी हुई प्रथा के चिन्ह दिखाई देते हैं जैसा कि 6 अगस्त सन् 2002 को मध्यप्रदेश में पन्ना जिले के पटना तमोली-ग्राम की घटना। यह एक ऐसी घटना है जिसने हमें मध्यकाल में ले जाकर खड़ा कर दिया है जबकि हमारे देश को आजाद हुये सात दषाब्दी व्यतीत हो चुकी है और आज भी हम देश को, समाज को और एक स्त्री को सुरक्षित जीवन नहीं दे पा रहे हैं तो यह बात निश्चय ही लज्जाजनक है। जबकि महिलाओं की प्रगति में ही देश की प्रगति हम निरूपित कर रहे हैं। महिला वर्ष मना रहे हैं और महिलाओं को समानता का अधिकार भी दे रहे हैं। आज भी इस सभ्य समाज में स्त्रियों पर अत्याचार हो रहे हैं। दहेज हत्या, बलात्कार, स्त्रियांे को नग्न करके घुमाना और कन्या भ्रूण हत्या ये सब हमें तीन सौ वर्ष पुराने समाज में ले जाकर खड़ा कर रहे हैं। आज आवश्यकता है उन्हीं पुराने आदर्शों और नैतिक मूल्यों की पुनस्र्थापना की जो हमारे महान समाज सुधारकों ने समाज को भेंट स्वरूप दिये थे।

राजा राममोहन राय ने भारतीय समाज में पुनर्जागरण की जो लहर उत्पन्न की थी उसने तत्कालीन समाज को एक नयी चेतना दी थी, इस चेतना को पुनर्जीवित किये बगैर हम आधुनिक समाज से इन विकारों को दूर नहीं कर सके। उन्होंने ही परम्परागत शिक्षा से हटकर पाश्चात्य ज्ञान-विज्ञान की हिमायत की थी। यह उनके विचारों की व्यापकता ही कही जायेगी कि हिन्दू और ईसाई दोनों ही धर्म के अनुयाईयों के विरोध के बावजूद वे एक ऐसी शिक्षा पद्धति का आविर्भाव करना चाहते थे जो देशवासियों को सदियों की निद्रा से जागृत करके उनमें आत्मचेतना और उदार विचारों का सूत्रपात कर सके।

अपने अथक प्रयासों से ही वे अंग्रेजी शिक्षा की व्यवस्था अपने देशवासियों के लिये करने में कामयाब हो सके। उनकी दूरगामी दृष्टि एक उज्जवल भविष्य को खोज रही थी और यह तभी संभव था जब लोग अपनी संकीर्ण मनोवृत्ति और दकियानूसी विचारधारा से परे हटकर, विसंगतियों को दूर करके सांस्कृतिक चेतना से परिपूर्ण हो सके। यह श्रेय निश्चय ही राममोहन राय को जाता है कि उन्होंने भारत में अंग्रेजी शिक्षा और पाश्चात्य ज्ञान विज्ञान की संभावनाओं पर बल देकर भारतीय जनमानस को अज्ञानता और पिछड़ेपन की जंजीरों से मुक्ति दिलवाई थी।

आज भारत में जो शिक्षा का प्रचार प्रसार और विज्ञान की उन्नति दिखाई दे रही है। उसके मूल में अट्ठारहवीं शताब्दी में रोपे गये वे आधुनिक शिक्षा के बीज हैं जो राममोहन राय द्वारा बोये गये थे।

राममोहन राय ने ही सर्वप्रथम शिक्षा में नवीन विचारों का समावेश करने के लिये कुछ व्यावहारिक परिवर्तन के सुझाव दिये थे। सन् 1832 में तत्कालीन गवर्नर लार्ॅड एमहर्स्ट को लिखा गया पत्र इस बात सबूत है कि वे भारतीय जनता को अज्ञान के अंधकार से मुक्त करके पाश्चात्य ज्ञान विज्ञान के प्रकाश में लाना चाहते थे, इसीलिये संस्कृत, व्याकरण और वेदान्त की पारम्परिक शिक्षा से हटकर अंग्रेजी के माध्यम से पाश्चात्य शिक्षा देने की वकालत की थी। वे जानते थे कि इस शिक्षा से लोगों में प्रशासनिक कार्यों के लिये क्षमता विकसित होगी जो भविष्य में कुशल नेतृत्व और व्यक्तित्व निर्माण में आवश्यक रहेगी।

उस काल में सामाजिक परिवर्तन का सबसे सशक्त साधन शिक्षा ही सिद्ध हुई, क्योंकि ज्ञान-विज्ञान और आधुनिक शिक्षा की दृष्टि से भारत का मध्यकाल शेष संसार की तुलना में पिछड़ा हुआ था। उस काल से उनकी यह सोच अत्याधुनिक थी। मध्ययुगीन शिक्षा पद्धति के स्थान पर वैज्ञानिक शिक्षा पद्धति से ही एक बुद्धिजीवी वर्ग का उदय हो

Copyright © 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-3 No. 1 March 2020

सकता था और इसी बुद्धिजीवी वर्ग द्वारा फिर आधुनिक समाज का ढांचा तैयार किया गया। धीरे-धीरे आधुनिक शिक्षा के पक्ष में जनमत संग्रह होता चला गया।

उन्नीसवीं सदी में भारतीय नव जागरण के लिये यदि किसी एक तत्व को सर्वाधिक श्रेय दिया जा सकता है तो वह है अंग्रेजी शिक्षा का आरम्भ। अंग्रेजी शिक्षा हर वर्ग के लोगों तक पहुँचाई जा सकती थी जबकि संस्कृत भाषा की शिक्षा पर केवल चंद ब्राह्मण वर्ग के ही लोगों का प्रभुत्व था। राममोहन राय ने हर गांव में एक अंग्रेजी स्कूल खोलने के लिये सरकार से जो मांग की थी उसका ही परिणाम है आज शिक्षा हर गाँव के बच्चे का अधिकार है और आज हमारे देश में निःशुल्क प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य कर दी गई है। (संविधान के 93 वें संशोधन के द्वारा 6 से 14 वर्ष तक के बच्चों के लिये शिक्षा को अनिवार्य कर दिया गया है।) हर गाँव में साक्षरता का प्रतिशत अधिकतम सीमा तक पहुँच चुका है। गाँवों में भी कृषि के नवीनतम साधनों का किसान उपयोग कर रहे हैं। उन्नत तकनीक और अच्छी गुणवत्ता के बीजों ने निश्चय ही कृषि के विकास में सहयोग दिया है।

स्पर्धा के इस युग में हम अन्य विकसित देशों की तुलना में आज भी बहुत पीछे चल रहे हैं फिर भी विकासशील देशों की श्रेणी में खड़े होकर विश्व के साथ कदम से कदम मिलाकर चलने का हम जो प्रयत्न कर रहे हैं, वह हमारे पूर्वजों के ही भागीरथी प्रयासों का फल है। आज भारत देश ने न सिर्फ कृषि में बल्कि उद्योगधंधों, वैज्ञानिक शिक्षा जैसे अंतरिक्ष विज्ञान, भूगर्भीय विज्ञान, चिकित्सकीय विज्ञान, भवन निर्माण, आधुनिक संचार साधनों के क्षेत्र में, कम्प्यूटर एवं ज्योतिषीय गणना के क्षेत्र में बहुत तरक्की की है और दिन प्रतिदिन सफलता के नवीन आयाम स्थापित करता ही जा रहा है। यह बात निश्चित रूप से सत्य है कि अंग्रेजी भाषा विश्व स्तर की भाषा है जिसको माध्यम बनाकर हम हर देश की संस्कृति, सभ्यता, तकनीक और ज्ञान-कौशल आदि का अध्ययन कर सकते हैं जबकि अन्य भाषायें क्षेत्र विशेष में ही प्रयुक्त की जाती हैं। अंग्रेजी भाषा के प्रचार प्रसार ने भारतीय जनता के ज्ञान चक्षु खोल दिये हैं और आज इस देश का बच्चा विश्व आकाश में उड़ान भरने के लिये अपने पर तौल रहा है। इसका वस्तुतः श्रेय पाश्चात्य ज्ञान-विज्ञान की हिमायत करने और भारतीयों को अंगे्रजी भाषा में पारंगत करने वाले राजा राममोहन राय और उनके तत्कालीन सहयोगियों को ही जाता है।

राजा राममोहन राय ने न सिर्फ शिक्षा को बहुआयामी बनाने के प्रयास किये वरन् साहित्य के क्षेत्र में भी उनका योगदान सराहनीय है। भारत की विभिन्न भाषाओं का साहित्य आज पश्चिम की प्रेरणा से ही प्रभावित हुआ है। भारतीयों का अंग्रेजी भाषा और साहित्य के माध्यम से यूरोप की विचारधारा से परिचय हुआ और यहीं से भारत की अन्य भाषाओं के साहित्य को दिशा दृष्टि मिल सकी। वृहत ज्ञान के भंडार जो मूक थे, साहित्य सृजन के माध्यम से प्रस्फुटित होने लगे। इससे आधुनिक साहित्य का मार्ग प्रशस्त हुआ। ज्ञान राशि की संचित अमूल्य निधि ही साहित्य है और इसमें लेखनी की अर्थात् अभिव्यक्ति की भूमिका प्रमुख है। बंगाली गद्य को नवीन दिशा देने का श्रेय सिर्फ और सिर्फ राममोहन राय को ही जाता है।

राममोहन राय ने जीवन के हर पहलू पर बारीकी से गौर किया है और जहाँ कहीं भी उन्हें विसंगतियाँ दृष्टिगत हुई उनके निवारण हेतु उन्होंने प्रयास करना आरम्भ कर दिये थे। हमने देखा कि उनकी मुख्य प्रेरणा धार्मिक और सामाजिक सुधार की थी, क्योंकि भारतीय जनता के पतन का वे मुख्य कारण धार्मिक और सामाजिक कुरीतियाँ को ही मानते थे। अतः उनको दूर करना ही उनका सर्वोपरि लक्ष्य था। मानवता के शाश्वत मूल्यों की पुनस्र्थापना करना ही उनका महान उद्देष्य था। यह उद्देश्य प्राप्त करने के मार्ग में जो भी कंटक उन्हें विदीर्ण करते, उसको ही वे अपने मार्ग से अलग करके अपने पीछे आने वाली पीढ़ियों के लिये सर्वसुविधायुक्त-सुरक्षित मार्ग प्रशस्त कर रहे थे।

एक बात की ओर निश्चय ही उनका ध्यान था और वह थी लोगों की आर्थिक दुरावस्था। यह आर्थिक दुरावस्था ही समाज में भेदभाव का मुख्य आधार बनी हुई थी और सुधार कार्यक्रमों के संचालन में बाधा भी थी। तत्कालीन अर्थव्यवस्था का अवलोकन करके उन्होंने यह पाया कि पूर्व की तुलना में ब्रिटिशों के आगमन के पश्चात् देश की आर्थिक स्थिति में काफी गिरावट आई है जिसका मुख्य कारण भारत की सम्पन्नता का प्रवाह पूर्व से पश्चिम दिशा में

Copyright © 2020 Authors

होना ही था। प्रशासन में व्यय अधिक हो रहा था। व्यापार और कृषि की स्थिति में गिरावट आने से आम आदमी दो वक्त की रोटी भी नहीं जुटा पा रहा था। तब उन्होंने शोषण की नीति के विरूद्ध आवाज उठाई और अंग्रेज सरकार का ध्यान लगाना और स्थाई बंदोबस्त प्रणाली की गलत नीतियों की ओर आकृष्ट करना आरंभ किया था। जमींदार परिवार के पुत्र होकर भी जमींदार प्रथा का विरोध करने वाला व्यक्ति कितना महान था। जिसने अपने निजी स्वार्थों की उपेक्षा करके किसानों और मजदूरों के हितों की रक्षा के लिये आवाज उठाई। इसके पीछे अपने परिवार और जमींदार वर्ग सबसे उनके सम्बन्ध कटुतापूर्ण हो गये किन्तु फिर भी इसकी परवाह न करते हुये उन्होंने शोषण का विरोध करके ईस्ट इंडिया कंपनी का ध्यान आकृष्ट करवाया। तत्कालीन परिस्थितियों में यह कार्य कितना कठिन रहा होगा, आज इसकी सहज ही कल्पना की जा सकती है।

उन्होंने स्पष्ट रूप से स्थाई बन्दोबस्त और रैयतवाड़ी प्रथा की आलोचना निडरतापूर्वक की और कहा कि इससे किसानों की स्थिति में नहीं अपितु जमींदारों की स्थिति में सुधार हुआ है। ईस्ट इंडिया कंपनी के प्रभुत्व काल में यह सुझाव देना कि काश्तकारों का उचित लगान तय कर दिया जाये और उसमें कोई वृद्धि न की जाये। इससे यदि सरकारी आय प्रभावित होती है तो प्रशासन के खर्च में कटौती की जाये तथा भोग-विलास की वस्तुओं पर कर लगाया जाये ताकि आम जनता की आर्थिक स्थिति में सुधार हो सके। यहाँ तक कि अंग्रेज अफसरोें के स्थान पर भारतीयों की नियुक्ति का सुझाव भी उन्होंने दिया। क्योंकि अंग्रेज अफसर ज्यादा वेतन लेते हैं जबकि उसी काम के लिये भारतीय कम वेतन में राजी हो जायेंगे। कितनी बेबाक और तथ्यपूर्ण सोच थी उनकी।

साथ ही उन्होंने यह भी मांग की थी कि मजिस्ट्रेटों को सप्ताह में एक बार लगान सम्बन्धी मामलों के निपटारे के लिये भी अदालत लगानी चाहिये। कलेक्टरों को मजिस्ट्रेट के अधिकार न दिये जायें और राजस्व अधिकारी के भ्रष्टाचार पर रोक लगाई जाये। यहाँ एक बात और ध्यान देने योग्य है कि भारत की गिरती हुई आर्थिक स्थिति की ओर सर्वप्रथम उन्होंने ईस्ट इंडिया कम्पनी का ध्यान आकृष्ट करवाया कि जो अंग्रेज भारत में सेवा करने के बाद वापस इंग्लैंड जाते हैं वे अपने साथ एक बड़ी रकम और कीमती उपहार ले जाते हैं जिनका कोई हिसाब नहीं रहता। धन का यह प्रवाह एकतरफा है। उन्होंने अपनी बात के पक्ष में कई तथ्य प्रस्तुत करके प्रमाणित कर दिया और ईस्ट इंडिया कम्पनी को जवाब देते न बना। यह उनके व्यक्तित्व के उस पहलू को स्पष्ट करता है जहाँ देश प्रेम की भावना सर्वोच्च हो जाती है।

राममोहन राय के आर्थिक विचारों का एक पहलू यह भी था कि वे ज्यादा से ज्यादा यूरोपीयन लोगों को भारत में बसाना चाहते थे जो कि न सिर्फ धनवान हो बल्कि बुद्धिजीवी वर्ग के भी हों। ताकि वे धन-संपत्ति, पाश्चात्य ज्ञान और उद्योगों की नवीनतम सम्भावनायें अपने साथ ला सके जिससे देश की अर्थव्यवस्था को उन्नत बनाने में सहायता मिलेगी। शुद्ध आर्थिक विकास की दृष्टि से उनका यह विचार नीति संगत था किन्तु आलोचकों ने उनके विचारों की गहराई को न समझते हुये उन्हें 'अंग्रेजों का पिट्ठू' तथा 'राष्ट्र विरोधी' की संज्ञा दे दी। फिर भी राममोहन राय और उनके मित्र देवेन्द्रनाथ टैगोर ने उन्मुक्त व्यापार नीति के पक्ष में ब्रिटिश सरकार को एक पत्र लिखा क्योंकि वे भारत की आर्थिक उन्नति और भावी पीढ़ी के लिये विकास के नये द्वार खोलना चाहते थे, जो यूरोपीयों के भारत आकर बसने पर सहजतापूर्वक हो सकता था। फिर भी उन्होंने कम्पनी के व्यापारिक एकाधिकार का विरोध किया। ब्रिटिश सरकार की अर्थ नीति को भांपकर, अपने विचारों का प्रस्तुतिकरण करना राममोहन राय के व्यक्तित्व की एक मौलिक विशेषता रही। दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि उन्होंने कांटे से कांटा निकालने का प्रयास किया।

राममोहन राय आत्मा की स्वतंत्रता और उन्मुक्त अभिव्यक्ति के पक्षधर थे। वे न स्वयं के अधिकारों का हनन बर्दाश्त कर सकते थे और न ही दूसरों के अधिकार क्षेत्र में हस्तक्षेप करते थे। उनकी राजनीतिक विचारधारा में भी स्वतंत्रता की मूल धारणा निहित रही। भारत में अंग्रेजों के बसने की उन्होंने जो हिमायत की इसमें उनकी उदारवादी विचारधारा झलकती है किन्तु शोषण के विरूद्ध उनकी लड़ाई एकतरफा थी। यहाँ पर उन्होंने सिर्फ और सिर्फ अपने देशवासियों की हिमायत की और ब्रिटिश हुकूमत का विरोध किया।

Copyright ⓒ 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-3 No. 1 March 2020

नमक पर अंग्रेजों का एकाधिकार समाप्त करने और नील काश्तकारों के अधिकार संबंधी आंदोलनों में उनकी देशप्रेम और शोषण का विरोध करने की मूल भावना झलकती है। इसके अलावा प्रेस की स्वतंत्रता के भी वे प्रबल पक्षधर थे और जब समाचार पत्रों की स्वतंत्रता पर प्रतिबंध लगाने हेतु प्रेस अध्यादेश जारी किया तो विरोध स्वरूप उन्होंने अपने 'मिरात-उल-अखबार' का प्रकाशन तक बंद कर दिया किन्तु अंग्रेजी हुकूमत के अपमानजनक अध्यादेश को स्वीकार नहीं किया। यह उनकी आत्म सम्मान की भावना को प्रदर्शित करता है। राजा राममोहन राय चाहते थे कि समाचार पत्र जन-जागरण के लिये एक सशक्त माध्यम सिद्ध हो सके। क्रांतिकारी लेखों और वास्तविक समाचारों को जनता तक पहुँचाना ही समाचार पत्र का ध्येय होना चाहिये, ताकि निष्पक्ष रूप से जनता अपनी राय दे सके तथा सरकार की गलत नीतियों पर अंकुश लग सके। सरकार ने प्रेस की स्वतंत्रता पर जो अंकुश लगाया था, उसके विरोध स्वरूप उग्र आंदोलन हुये और धीरे-धीरे सरकारी रवैये में थोड़ी सी ढील दी गई। अंत में सन् 1882 में बर्नाक्युलर प्रेस कानून को रद्द कर दिया गया।

भारतीय संविधान में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार निरूपित है। समाचार पत्रों को लोकतंत्र का सजग प्रहरी माना जाता है। आपात काल को छोड़कर, सामान्य रूप से भारत वर्ष में आज भी समाचार पत्रों को पूरी स्वतंत्रता दी गई है। संचार माध्यमों के द्वारा भी बेबाक समाचारों का प्रकाशन-प्रसारण किया जा रहा है। आज देश में 'मीडिया' जनता के लिये देश की स्थिति प्रतिपल जानने का एक सशक्त स्त्रोत है। इस प्रकार हम देख रहे हैं कि आधुनिक भारत के निर्माण से लेकर विकास की इस तीव्र धारा में समाचार पत्रों की निर्णायक भूमिका रही है। निश्चय ही इस दिशा में सर्वप्रथम मार्गदर्शन देने वाले और स्वतंत्रता के स्वर मुखरित करने वाले राजा राममोहन राय ही प्रथम भारतीय थे।

हर क्षेत्र में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले राजा राममोहन राय न्याय-प्रशासन के क्षेत्र में भी पीछे नहीं रहे। न्याय प्रशासन में जनता के सहयोग का विचार राममोहन राय को ब्रिटिश न्याय-व्यवस्था से ही प्राप्त हुआ था। ब्रिटिश शासन के आरंभिक काल में राममोहन राय की ब्रिटिश न्याय प्रशासन में पूरी निष्ठा थी। वे मध्यकाल के स्वेच्छाचारी शासन से अंग्रेज न्याय व्यवस्था को उत्तम मानते हुये उसकी सराहना करते रहे। उस काल में जूरी-प्रथा इंग्लैंड की न्याय-व्यवस्था का एक महत्वपूर्ण अंग और निष्पक्ष न्याय की एक आवश्यक शर्त थी। इसलिये भारतीय विचारक और विद्वान प्रगतिशील नेता भारत में इंग्लैंड के तौर तरीकों से मुकदमोंे की जाँच और निर्णय के सिलसिले में जूरी प्रथा को आरंभ करना चाहते थे, चूँकि ब्रिटिश न्यायाधीश भारतीय भाषाओं से सर्वथा अपरिचित थे और वे यहाँ के रीति-रिवाजों से भी परिचित नहीं थे अतः पूर्ण न्याय की आशा करना व्यर्थ था। राममोहन राय कम्पनी की भेदभावपूर्ण नीति से भी परिचित हो चुके थे। चूंकि गोरे-काले का भेद चरम सीमा पर था अतः उन्होंने यह सुझाव दिया कि जिन लोगों को भारतीयों के रीति-रिवाजों, आचारों और परम्पराओं की जानकारी है, सरकार को न्याय प्रशासन में उनका सहयोग लेना चाहिये।

सन् 1826 में पारित हुये ईस्ट इंडिया जूरी एक्ट का राममोहन राय ने जो तीव्र विरोध किया वह उचित ही था क्योंकि इस एक्ट ने ईसाईयों और भारतीयों के बीच भेद की एक ऊँची दीवार खड़ी कर दी थी। अंग्रेजों की नीति कि-भारतीयों के मामले में ईसाई जूरी होंगे किन्तु ईसाई लोगों के न्याय हेतु हेतु सिर्फ ईसाई जूरी ही रहेंगे, भारतीय नहीं, ये बड़ी ही भेदभावपूर्ण थी। इसके पीछे भारतीयों को ईसाई बनने के लिये विवश करना ही उनका मूल उद्देश्य था। भारतीय लोगों का इस अपमान से तिलमिलाना स्वाभाविक ही था। राममोहन राय ने कोर्ट आॅफ डायरेक्टर्स के इस रूख की तीखी निन्दा की। रामामेहन राय इस समय तक इंग्लैंड पहुँच चुके थे और उचित रीति से उन्होंने कोर्ट आॅफ डायरेक्टर्स की सभी आपत्तियों का संतोषजनक समाधान प्रस्तुत किया था। उन्होंने इस बात पर अधिक बल दिया कि भारत जैसे बहुसमुदायवादी देश में पंथ निरपेक्षता की आवश्यकता है और प्रत्येक सरकार का यह कत्तव्य हो जाता है कि वह अपने संरक्षण में रहने वाले विभिन्न धर्मों ओर जातियों के लोगों के साथ समानता का व्यवहार करें। सबको एक बड़ा परिवार मानेंे। किसी एक जाति विशेष के साथ पक्षपात न करें। इस प्रकार उनके अथक प्रयासोंे से और बोर्ड आॅफ कंट्रोल के नये अध्यक्ष चाल्स ग्रांट के राममोहन राय के विचारों से प्रभावित होने के कारण 18

Copyright © 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-3 No. 1 March 2020

जून 1832 को ग्रांट का जूरी बिल पास हो चुका था। इस प्रकार भारत में जूरी प्रथा के प्रवर्तन का पूरा श्रेय राजा राममोहन राय को ही दिया जाता है। अपनी बात को पुष्ट करने के लिये इंग्लैंड तक में जाकर कोर्ट आॅफ डायरेक्टर्स के समक्ष उपस्थित होकर निर्भीकतापूर्वक अपनी राय की पुष्टि में जवाब प्रस्तुत करना और कम्पनी अधिकारियों की आपत्तियों का निवारण करके जूरी बिल पास करवाना एक बहुत बड़ी सफलता थी।

आज हमारे देश मेंे न्याय पालिका को सर्वोच्च स्थान दिया गया है और भारत का सर्वोच्च पदासीन व्यक्ति भी न्याय पालिका के अधीन आता है। यह न्याय प्रशासन ही हमारे प्रजातंत्र की रीढ़ रज्जू है। छोटे से छोटा व्यक्ति अपने अधिकारों का उपयोग करने के लिये स्वतंत्र है किन्तु कत्र्तव्यों का निर्वाह करने हेतु बाध्य है। अधिकारों और कत्र्तव्यों ने हमारे देश में उच्च प्रजातांत्रिक आदर्शों को स्थापित करने में प्रमुख भूमिका का निर्वाह किया है। समान न्याय व्यवस्था का जो मूल मंत्र राजा राममोहन राय ने 19 वीं सदी में दिया था वह आज भी संविधान का मुख्य आदर्श है। राममोहन राय ने न केवल अपने देशवासियोंे के लिये वरन् समस्त मानव जाति के लिये संघर्ष किया। समस्त प्रगतिशील संसार उनके सुधारों का आदर करता है एवं उनके द्वारा स्थापित नैतिक मूल्यों के समक्ष नतमस्तक है।

संदर्भ-

1. कार्तिक चन्द्र दत्त-राजा राममोहन रायः जीवन और दर्शनः पृ. 50

2. जमुना नाग-भारत के महान समाज सुधारक राममोहन राय, पृ. 15

3. जे. के. मजूमदार-राजा राममोहन राय एंड प्रोग्रसिव मूवमेण्ट इन इंडियाः पृ. 18

4. बृजेन्द्र नाथ बन्दोपाध्याय-राममोहन रायः पृ. 32

5. इकबाल सिंग-राजा राममोहन रायः पृ. 107

6. एस. डी. कोलेट-लाइफ एंड लेक्चर्स आॅफ राजा राममोहन रायः पृ. 110

Copyright © 2020 Authors